❑ श्रीनारायण पाण्डेय,

राहुल सांकृत्यायन : चिन्तन की दिशायें

राहुल सांकृत्यायन हिन्दी नवजागरण के निर्मित और निर्माता दोनों थे। राहुल सांकृत्यायन के सम्बन्ध में लिखते हुए उनके बौद्धिक मित्र डॉ. महादेव साहा ने राहुल की तुलना यूरोपीय नवजागरण के अग्रदूतों के साथ की है। बौद्ध दर्शन के अध्ययन में निमग्नता का काल हो अथवा साम्यवादी विचार धारा से प्रेरित हो यायावरी का काल, राहुल अपनी सोच-समझ, विचार-विवेचन में एक महान् पुरुष थे। यूरोपीय नवजागरण के अग्रदूतों की ही तरह उनके ज्ञान की सीमा नहीं थी। अपने इस मन्तव्य के लिए उन्होंने फ्रेडरिक एन्गेल्स की पुस्तक "प्रकृति का द्वन्दवाद" की भूमिका से उद्धरण दिया है। एन्गेल्स ने यूरोपीय नवजागरण के अग्रदूतों की चर्चा करते समय लिउनार्दो दा विची, अल्ब्रेख्ट डूशर, मेकियावेली, लूथर जैसों के अवदान का हवाला देकर कहा है कि ये सभी केवल एक विषय में पारंगत रहे हों, ऐसा नहीं। एक ही साथ बहुतेरे विषयों के जानकार थे। इनकी सफलता का रहस्य यह था कि ये तत्कालीन आंदोलनों से जीवनी शक्ति प्राप्त करते थे। जन संघर्षों में कभी कलम तो कभी तलवार लेकर शरीक होते थे। जीवन की इस वास्तविकता के बीच वे तरह-तरह के वैज्ञानिक सूत्रों के आविष्कर्ता थे तो राजनैतिक चिन्ताधारा के प्रवक्ता एवं सामाजिक तथा धार्मिक अवरोधों के संस्कारक भी थे।

एंगेल्स के मत का सारांश इसलिए देना पड़ा कि राहुल के बहुआयामी व्यक्तित्व में ये सारी विशेषताएं विद्यमान थीं। राहुल भी एक साथ ही बौद्ध त्रिपटकाचार्य, पुरातात्विक, साहित्यकार, घुमक्कड़, इतिहासकार, लिपिविशेषज्ञ, भाषाविद् एवं समाजशास्त्री थे। भारतीय अस्मिता की तलाश में भटकने वाले राहुल तथा बिहार के किसान आंदोलन में सक्रिय राजनीतिज्ञ राहुल एक ही थे। साम्राज्यवादी शिकंजे से देश को मुक्त देखना उनका सपना था और सामन्ती समाज व्यवस्था के दुष्परिणामों तथा कुसंस्कारों से मुक्त समाज व्यवस्था का निर्माण उनकी आकांक्षा थी। इस सबके लिए उन्होंने साम्यवादी चिन्ता-धारा का सहारा लिया था। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उन्होंने आजीवन संघर्ष किया। राहुल की चिन्ता-धारा ने एक बड़े समुदाय को जागरुक किया। राहुल ने एक ऐसे समय में यह काम शुरू किया था, जब हिन्दी भाषा में इस विषय की पुस्तकों का अभाव था। राहुल सांकृत्यायन की सामाजिक दृष्टि का दस्तावेज उनकी पुस्तकें है।

राहुल जी का जन्म 1893 में हुआ था और मृत्यु 1963 में हुई थी। यह काल भारतीय इतिहास में चुनौतियों का काल है। अंग्रेजी साम्राज्यवाद का उत्कर्ष और अपकर्ष, स्वाधीनता संग्राम, स्वाधीनता प्राप्ति, बाद के करीब 25 वर्ष, दो विश्वयुद्ध, रूस में समाजवाद की स्थापना, हिन्दू-मुस्लिम झगड़े, हिन्दू महासभा और मुस्लिम लीग की स्थापना, भारत विभाजन, साम्प्रदायिक दंगे, गांधीवाद और समाजवाद, क्रांतिकारियों का बलिदान, किसान मजदूर आंदोलन, सामंती एवं पूंजीवादी मूल्यों की टकराहट, वर्ण-व्यवस्था, अछूतों का उभार, मौलवाद की कट्टरता, भाषाई एवं सांस्कृतिक आंदोलन, इतिहास की पुनर्व्याख्या, साम्यवादी चिंताधारा का प्रसार, राजनीति में मूल्यों की गिरावट, बढ़ती अवसरवादिता इस प्रकार के बहुतेरे परिवर्तन भारतीय जीवन में हो रहे थे, जिनका प्रभाव जनमानस पर पड़ रहा था। राहुलजी उन बुद्धिजीवियों में नहीं थे जो निरपेक्षता का बाना पहन कर खुद को और देशवासियों को धोखा देते हैं। राहुल ऐसे बुद्धिजीवी थे, जिन्होंने प्रगति का समर्थन और प्रगतिविरोधी ताकतों का विरोध किया है। एक साधारण से निबन्ध के द्वारा उनके विचारों का परिचय देना दुष्कर है। इसमें कुछ ऐसे विचारों को ही प्रस्तुत किया जा रहा है, जिसे राहुल जी अवैज्ञानिक एवं प्रगति विरोधी मानते थे। उनके ये विचार आज के संदर्भ में और भी प्रासंगिक हो उठे हैं। अतएव उनके शतीवर्ष में इस चर्चा की विशेष प्रासंगिकता है।

भारतीय अस्मिता की तलाश, वैज्ञानिक चिन्ताधारा का प्रसार और देश निर्माण, राहुल की चिन्ताधारा का त्रिकोण है। जिसके केन्द्र में भारतीय जन के पूर्ण विकास की कामना ही मुख्य थी। चाहे इतिहास हो, चाहे धर्म, संस्कृति या दार्शनिक चिंताधारा, समाज व्यवस्था का ढांचा, भाषा, सबके प्रति राहुल की वैज्ञानिक दृष्टि एक-सी है। जो तर्क सम्मत नहीं है, वह अग्राह्य है। इसी से स्थिरता या जड़ता का नाम-निशान उनके चिन्तन में गायब है।

शुरुआत राहुल की इतिहास संबंधी अवधारणा से की जाय। राहुल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भारत की प्राचीन आर्यभाषाओं के पंडित थे। आकर ग्रन्थों को पढ़ा था। धर्म और संस्कृति का अध्ययन किया था। इसके अलावा देश-विदेश की और भी कई भाषाओं को जानते थे। इतिहास में रुचि थी, इतिहास लेखक भी थे। ऋगवैदिक आर्य, अकबर, मध्य एशिया का इतिहास, कई महापुरुषों की जीवनियां, पुरातात्विक निबन्ध उनके इतिहास प्रेम के प्रमाण हैं। भारतीय मनीषा की उपलब्धियों पर राहुल को गर्व था, किन्तु झूठे दम्भ के वे कटु आलोचक थे।

राहुलजी भी रवीन्द्रनाथ ठाकुर की ही तरह आज के प्रचलित इतिहास को इतिहास नहीं मानते थे। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भी इतिहास के संबंध में प्रश्न उठाकर कहा था कि स्कूलों में पढ़ाया जाने वाला इतिहास इतिहास नहीं है। राहुल 'जन-इतिहास' के पक्षधर थे। उन्होंने लिखा है कि, "हमारा इतिहास तो राजाओं और पुरोहितों का इतिहास है जो कि आज की तरह उस जमाने में भी मौज उड़ाया करते थे। उन अगणित मनुष्यों का इस इतिहास में कहां जिक्र है, जिन्होंने कि अपने खून के गारे से ताजमहल और पिरामिड बनाये, जिन्होंने कि अपनी हड्डियों की मज्जा से नूरजहां को अतर से स्नान कराया, जिन्होंने कि लाखों गर्दन कटाकर पृथ्वीराज के रनिवास में संयोगिता को पहुंचाया? उन अगणित योद्धाओं की वीरता का क्या हमें कभी पता लग सकता है जिन्होंने कि सन् सत्तावन के स्वतंत्रता युद्ध में अपनी आहुतियां दी? दूसरे मुल्क के लुटेरों के लिए बड़े-बड़े स्मारक बने, पुस्तकों में उनकी प्रशंसा का पुल बांधा गया। गत महायुद्ध में ही करोड़ों ने कुर्बानियां दी, लेकिन इतिहास उनमें से कितनों के प्रति कृतज्ञ है? **(तुम्हारी क्षय पृ0 31-32)**

राहुल जन-इतिहास चाहते थे, किन्तु इतिहास का झूठा दंभ उन्हें पसन्द नहीं था। हर दृष्टि से भारत को सबसे गौरवशाली सिद्ध करने की झोंक राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान दिखाई पड़ी थी और आज भी कुछ अतिरिक्त परम्परा प्रेमियों में यह झोंक विद्यमान है जिसकी एक तर्कसंगत परिणति फासिज्म में होती है। इतिहासाश्रयी इस राजनीतिक चिन्ताधारा से राहुल सजग थे। इतिहास की विकृत व्याख्या उन्हें पसन्द नहीं थी। इस झोंक का विरोध करते हुए उन्होंने लिखा है कि, "जिस जाति की सभ्यता जितनी पुरानी होती है उसकी मानसिक दासता के बन्धन भी उतने ही अधिक होते हैं। भारत की सभ्यता पुरानी है, इसमें तो शक ही नहीं और इसलिए इसके आगे बढ़ने के रास्ते में रुकावटें भी अधिक हैं। मानसिक दासता प्रगति में सबसे अधिक बाधक होती है। ...वर्तमान शताब्दी के आरम्भ में भारत में राष्ट्रीयता की बाढ़ सी आ गई, कम से कम तरुण शिक्षितों में। यह राष्ट्रीयता बहुत अंशों में श्लाघ्य रहने पर भी कितने अंशों में अंधी राष्ट्रीयता थी। झूठ सच जिस तरीके से भी हो, अपने देश के इतिहास को सबसे अधिक निर्दोष और गौरवशाली सिद्ध करने अर्थात् अपने ऋषि मुनियों, लेखकों और विचारकों, राजाओं और राजसंस्थाओं में बीसवीं शताब्दी की बड़ी से बड़ी राजनैतिक महत्व की चीजों को देखना हमारी इस राष्ट्रीयता का एक अंग था। अपने भारत को प्राचीन भारत और उसके निवासियों को हमेशा दुनिया के सभी राष्ट्रों से ऊपर साबित करने की दुर्भावना से प्रेरित हो हम जो कुछ भी अनाप-शनाप ऐतिहासिक खोज के नाम पर लिखें, उसको यदि पाश्चात्य विद्वान न माने तो झट से फतवा पास कर देना कि सभी पश्चिमी ऐतिहासिक अंग्रेजी और फ्रांसीसी, जर्मन और इटालियन, अमेरिकन और रूसी, डच और चेकोस्लाव सभी बेईमान हैं। सभी षड्यंत्र करके हमारे देश के इतिहास के बारे में झूठी-झूठी बातें लिखते हैं। वे हमारे पूजनीय वेद को साढ़े तीन और चार हजार वर्षों से पुराना नहीं होने देते (हालांकि वे ठीक एक अरब बानवे वर्ष पहले बने थे)। इन भलमानसों के ख्याल में आता है कि अगर किसी तरह से हम अपनी सभ्यता, अपनी पुस्तकों और अपने ऋषि मुनियों को दुनिया में सबसे पुराना साबित कर दें, तो हमारा काम बन गया। इस बेवकूफी का भी कहीं ठिकाना है कि बापदादों के झूठ-मूठ के ऐश्वर्य से हम फुलें न समायें और हमारा आधा जोश उसी की प्रशंसा में खर्च हो जाय।" **(दिमागी गुलामी)**

हमने ऊपर चर्चा की है कि राहुल का इतिहास और परम्परा प्रेम अंध राष्ट्रीयता पर आधारित नहीं था। उनका कथन था, "अपनी मानसिक दासता की बेड़ी की एक-एक कड़ी को बेदर्दी के साथ तोड़कर फेंकने के लिए तैयार होना चाहिए।" राहुल की ऐतिहासिक अवधारणा वैज्ञानिक थी। आज की इतिहास चर्चा के संदर्भ में यह अवधारणा अधिक उपयोगी है। राहुलजी संस्कृत, पालि, प्राकृत, अप्रभंश के पंडित थे। उन्होंने इन भाषाओं के आकर ग्रन्थों का अध्ययन कर ऋगवैदिक आर्य, बोल्गा से गंगा, सिंह सेनापति तथा जय यौधेय, दिवोदास जैसे ग्रन्थ लिखे, जिनमें प्राचीन भारत की संस्कृति का चित्र मिलता है।

इतिहास की ही तरह ईश्वर और धर्म के बारे में भी उनकी अवधारणा थी। भारतीय इतिहास में आज ईश्वर और धर्म को अहम मुद्दा बना दिया गया है। राहुल विकासवाद के सिद्धांत को मानने वाले थे। अतएव ईश्वर और धर्म संस्थानों के बारे में वे मौलवादियों से एकदम भिन्न थे। उनकी इन धारणाओं पर विचार करते समय उनके चिन्तन के विकास-क्रम को ध्यान में रखना होगा। बचपन में सनातनी हिन्दू संस्कारों में पले राहुल किस प्रकार आर्य समाज, बौद्ध धर्म फिर साम्यवाद की ओर बढ़ते गये और अन्त में कम्युनिस्ट की हैसियत से मरे। यह सब उनकी मानसिकता का बेरोमीटर है। आत्मवाद से अनात्मवाद की ओर उनकी दार्शनिक परिणति है। जिसका ठेठ अर्थ है कि राहुल सांकृत्यायन भारतीय लोकायत दर्शन परम्परा के मनीषी थे।

प्रसिद्ध बौद्ध दार्शनिक धर्मकीर्ति का यह कथन उन्हें बहुत प्रिय था :-

वेद प्रामाण्यं कस्यचित् कर्तृवादः स्नानेधर्मेच्छा जाति वादाय लेपः।
संतापारंभः पापहानायचेतिध्वस्तप्रज्ञा नां पंचलिंगा नि जाड्ये॥

(प्रमाण वार्तिक स्ववृत्ति 1/342)

"वेद (=ग्रंथ) को प्रमाणता किसी (ईश्वर) का (सृष्टि) कर्तापन (=कर्तृवाद), स्नान (करने) में धर्म (होने) की इच्छा रखना जातिवाद (=छोटी-बड़ी जाति पांति) का घमंड और पाप दूर करने के लिए (शरीर को) संताप देना (=उपवास तथा शारीरिक तपस्याएं करना) - ये पांच हैं अकल मारे (लोगों) की मूर्खता (=जड़ता) की निशानियां।"

दर्शन - दिग्दर्शन - पृ0 803-4 प्र0 संस्करण,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्मकीर्ति को राहुल ने "भारतीय हेगल" कहा है।

धर्मकीर्ति के साथ सिद्ध सरहपा के इन दोहों को साथ रख लेने पर राहुल के विचारों को और सफाई से समझा जा सकता है। सरहपा राहुल के प्रिय लेखक हैं। अत्युक्ति न होगी अगर कहें कि राहुल आज के सरहपा है विभिन्न अर्थो में।

जइ णग्गा विअ होई मुत्ति ता सुणह सिआलह।
लोमु (3) पांडणें अत्थि सिद्धि ता जुवइणिअम्बह।।
पिच्छीमहणे दिट्ठ मोक्ख (ता मोरह चमरह)
उच्छे भोअणे होइ जाण ता करिह तुरंगह।।

चर्यामीति कोश: पृ0 188

सं0 प्रबोधचन्द्र बागची, शांति भिक्षु,

सरहपा ने यहां जैनियों के बाह्याचार पर व्यंग किया है।

अगर हम राहुल के इस वाक्य से उनके धर्म और ईश्वर संबंधी अवधारणा की चर्चा करें कि "मजहब और खुदा गरीबों का सबसे बड़ा दुश्मन है" तो उनके विचारों को समझने में सहूलियत होगी। अपनी "साम्यवाद ही क्यों?" पुस्तक में राहुल ने साम्यवाद तथा धर्म और ईश्वर पर विचार करते समय लिखा है कि "मनुष्य जाति के शैशव की मानसिक दुर्बलताओं और उससे उत्पन्न मिथ्या विश्वासों का समूह ही धर्म है। यदि उसमें और भी कुछ है, तो वह है पुरोहितों और सत्ताधारियों के धोखे फरेब, जिनसे वह अपनी भेड़ों को अपने गल्ले से बाहर जाने देना नहीं चाहते। मनुष्य के मानसिक विकास के साथ-साथ यद्यपि कितने ही अंश में धर्म ने भी परिवर्तन किया है, कितने ही नाम भी उसने बदले हैं, तो भी उनसे उसके आंतरिक रूप में परिवर्तन नहीं हुआ है। वह आज भी वैसा ही हजारों मूढ़ विश्वासों का पोषक और मनुष्य की मानसिक दासताओं का समर्थक है, जैसा कि पांच हजार वर्ष पूर्व था।"

और ईश्वर? उसके संबंध में राहुल का कहना है कि "धर्म और ईश्वर का प्राय: अटूट संबंध है- यह भी मनुष्य के शैशव काल के भयभीत अन्त:करण की सृष्टि का एक विकसित रूप है। वस्तुत: ईश्वर मनुष्य का मानसपुत्र है।"

ईश्वर का खयाल हमारी सभी प्रकार की प्रगति का बाधक है। मानसिक दासता की वह जबर्दस्त बेड़ी है। शोषकों का वह अस्त्र है, क्योंकि उसके सहारे वह कहते हैं- "धनी गरीब उसके बनाये हुए हैं वह जो करता है, सब ठीक करता है उसकी मर्जी पर अपने को छोड़ दो।" राहुल समाजशास्त्री थे। हर वस्तु के कार्यकारण पर गंभीरता से विचार करते थे। ईश्वर और धर्म की चर्चा में वे इस नतीजे पर पहुंचे कि "ईश्वर पूंजीपतियों के बड़े काम की चीज है। यदि ईश्वर का ख्याल पहले से न होता तो आज वह उसका आविष्कार करते। यही वजह है कि थके दिमाग वाले शोषकों के पोषक कितने ही वैज्ञानिक धर्म और ईश्वर के समर्थक देखे जाते हैं।" अगर राहुल जिन्दा होते तो जोर देकर इतना वे और कहते कि "ईश्वर आज के राजनीतिज्ञों के भी बड़े काम की चीज है। वे कितने ईश्वर भक्त हैं कि देश की एकता को भी दांव पर चढ़ा कर मन्दिर, मस्जिद की तलाश में निरीहों का खून बहा रहे हैं।"

ईश्वर और धर्म के संबंध में यह धारणा किसी एक मजहब या सम्प्रदाय के सम्बन्ध में नहीं थी। विश्व के नक्शे में धर्म का जो अमानवीय रूप उभरा है उसी के विश्लेषण पर उन्होंने यह राय कायम की थी।

"तुम्हारी क्षय" पुस्तक में उनके विचार उल्लेखनीय हैं। उनका कहना है कि यह दलील गलत है कि सभी धर्म समान भाव से सदुपदेश देते हैं। उनका कहना है कि दुनिया के सभी मजहबों में भारी मतभेद है। ये मतभेद सिर्फ विचारों तक ही सीमित नहीं रहे, बल्कि पिछले दो हजार वर्षों का इतिहास बतला रहा है कि इन मतभेदों के कारण मजहबों ने एक-दूसरे के ऊपर जुल्म के कितने पहाड़ ढाए। यूनान और रोम के अमर कलाकारों की कृतियों का आज अभाव क्यों दीखता है? इसलिए कि वहां एक मजहब आया जो ऐसी मूर्तियों के अस्तित्व को अपने लिए खतरे की चीज समझता था। ईरान की जातीय कला, साहित्य और संस्कृति का नामशेष-सा क्यों हो जाना पड़ा? क्योंकि उसे एक ऐसे मजहब से पाला पड़ा जो इंसानियत का नाम भी धरती से मिटा देने पर तुला हुआ था। मेक्सिको और पेरू, तुर्किस्तान और अफगानिस्तान, मिस्र और जावा जहां भी देखिये, मजहबों ने अपने को कला, साहित्य और संस्कृति का दुश्मन साबित किया और खून खराबी? इसके लिए तो पूछिये मत। अपने-अपने खुदा और भगवान के नाम पर अपनी-अपनी किताबों और पाखंडों के नाम पर मनुष्य के खून को उन्होंने पानी से भी सस्ता कर दिखलाया। पोप और पेत्रियार्क, एंजिल और ईसा के नाम पर प्रतिभाशाली व्यक्तियों के विचार स्वातंत्र्य को आग और लोहे के जरिये दबाते रहे। कितनों को जीते जी आग में जलाया, कितनों को चर्खी से दबाया।

भारतीय धार्मिक मदान्धता पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने लिखा कि "हिन्दुस्तान की भूमि ऐसी धार्मिक मदान्धता की कम शिकार नहीं रही। इस्लाम से आने के पहले भी क्या मजहब ने वेदमंत्र बोलने और सुनने वालों के कानों में पिघले रांगे और लाख को नहीं भरा? ...इस्लाम के आने के बाद तो हिन्दू धर्म और इस्लाम के खूंरेज झगड़े आज तक चल रहे हैं। कहने के लिए इस्लाम शक्ति और विश्वबन्धुत्व का धर्म कहलाता है, हिन्दू धर्म ब्रह्मज्ञान और सहिष्णुता का धर्म बतलाया जाता है। किन्तु क्या इन दोनों धर्मों ने अपने इस दावे को कार्यरूप में परिणत करके दिखलाया है?"

राहुलजी के प्रश्न का उत्तर है नहीं। न तब और न आज। राहुल ने बड़े कठोर शब्दों में लिखा- "हिन्दुस्तानियों की एकता मजहबों के मेल पर नहीं होगी, बल्कि मजहबों की चिता पर।" धर्म का यह हिंसात्मक और फरेबी रूप राहुल को पसन्द नहीं था। जिन दिनों राहुल सक्रिय राजनीति कर रहे थे उन दिनों उन्होंने निहित स्वार्थो द्वारा धर्म का घृणित उपयोग देखा था। इस प्रकार धर्म और ईश्वर के मसले पर राहुल कटु से भी अधिक कटु थे। सभाओं में वे अपनी बात कहने में हिचकिचाते नहीं थे।

बिहार की बहुतेरी जनसभाओं में उन्हें सक्रिय विरोध का सामना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी करना पड़ा था। धर्म के व्यावहारिक रूप को देखकर वे कटु हो उठे थे।

नवजागरण के बीच हर समझदार को जिन समस्याओं से टकराना पड़ा था उनमें ही एक हिन्दू और मुसलमान की समस्या थी। दोनों धर्मों के व्यवहार पक्ष की भूमिका का उल्लेख ऊपर किया गया है। किन्तु इसके तल में प्रवेश कर राहुलजी ने कहा था कि "इस समस्या की बुनियाद किसी मजबूत पत्थर पर नहीं है। कोई आर्थिक प्रश्न ऐसा नहीं है जो इस समस्या की जड़ में हो और आर्थिक प्रश्न ही किसी बात को मजबूत बनाता है। यह सारा झगड़ा उच्चवर्ग और मध्यवर्ग का बनाया है। हिन्दू मुस्लिम झगड़ों से उनका (बड़ों का) कोई नुकसान नहीं होता। मरते और जेल जाते हैं, तो साधारण गरीब लोग।" राहुल जी के इस विश्लेषण में उल्लेखनीय है किसी वस्तु के विरोध में अर्थ की भूमिका एवं गरीबों को मौलवाद से अलग करके देखना। आज की राजनीति में वस्तुत: इस धार्मिक मुद्दे को लेकर जितना परेशान उच्चवर्ग या मध्यवर्ग है, उतना गरीब या किसान मजदूर नहीं। पारस्परिक भाई-चारे के द्वारा इस समस्या का समाधान संभव है बशर्त मौलवादियों की भूमिका ध्यान में रहे। राहुल का कहना है, उच्च और मध्यवर्ग के चरित्र का पर्दाफाश करना आवश्यक है। प्रेमचंद ने अपने कथा साहित्य तथा प्रबंधों में यह काम किया था।

सामन्ती समाज व्यवस्था की ही उपज एक और समस्या हमारे बीच बार-बार आती रही है और हम उसके सही उपचार की अपेक्षा सामयिक मरहम पट्टी कर देते रहे हैं। राहुल ने लिखा है कि "समाज की बेड़ियां जेलखाने की बेड़ियों से भी सख्त है।" अछूत या हरिजन समस्या इसी तरह की एक सामाजिक व्याधि है। वर्णव्यवस्था की जंजीरों से जकड़ा अभिशप्त अछूतों का वृहत वर्ग अपनी सामाजिक मुक्ति के लिए तड़फड़ा रहा है। न जाने कब और किस अशुभ घड़ी में इस व्यवस्था का प्रादुर्भाव हुआ था मगर आज भी वह गुंजलक मारकर बैठी हुई है। कभी हम उसको धार्मिक पूजा पाठ के बहाने मंदिर प्रवेश की ओर ठेलते हैं तो कभी सामाजिक न्याय के नाम पर नौकरी के टुकड़े फेंकते रहे हैं। इस प्रकार सतही समाधान कर अपनी उदारता का दंभ करते हैं। इस मंडल और कमंडल के बीच उन्हें झूठे और सामयिक भुलावे में रखे हुए हैं। राहुलजी ने इस पर लिखा है कि "धर्म पुस्तकें इस अन्याय के आध्यात्मिक और दार्शनिक कारण पेश करती हैं।" यह भेद भाव हिन्दू-मुसलमान दोनों में है। मुसलमानों में भी मोमिन और गैर मोमिन का सवाल पैदा होता है। राहुलजी ने अछूत समस्या के मूल में आर्थिक स्वतंत्रता का अभाव बताते हुए लिखा है कि "(हरिजनों) उनके लिए मंदिरों के द्वार खोलने के लिए प्रचार करने में हमें समय नहीं खोना चाहिए। यह काम केवल व्यर्थ ही नहीं, बल्कि खुद हरिजनों के लिए खतरनाक भी है। यह पुरोहितों की चालाकी और धर्मान्धता ही है जो कि उनकी वर्तमान अधोगति का कारण है। इन सरल मनुष्यों को ऐसी सरल सस्ती औषधि न दीजिए। पुजारी, धर्म और मन्दिर को जहन्नुम में जाने दीजिए। अगर आपके सामने अपने देश और अपने लिए कोई आदर्श है तो उनकी (हरिजनों) आर्थिक विषमताओं का अध्ययन कीजिए और उनको दूर करने की चेष्टा कीजिए। औद्योगिक योजना में सरकार हरिजनों को अधिक से अधिक आगे बढ़ाने का अवसर प्रदान कर सकती है।"

इन विषयों के अलावा भी राहुलजी ने जमींदारी, किसान, खेतिहर-मजदूर, शिक्षा, सदाचार, समाज जैसे विषयों पर भी विचार किया है। इस दृष्टि से उनकी पुस्तक "दिमागी गुलामी" एवं "तुम्हारी क्षय" पठनीय है। इसी तरह "साम्यवाद ही क्यों" पुस्तक में उन्होंने सरल भाषा में साम्यवाद के मुद्दों का परिचय दिया। ये तीनों पुस्तकें राहुलजी की समाज चेतना को समझने में बड़े काम की हैं।

राहुल की समाज चेतना के दर्शनिक आधार की जानकारी के लिए उनकी पुस्तक "दर्शन दिग्दर्शन" का अध्ययन आवश्यक है। जिसमें उन्होंने विविध दार्शनिक धाराओं का मूल्यांकन कर अनात्मवादी लोकायत दर्शन की ओर दृष्टि आकर्षित की है। राहुल का सारा प्रयास रूढ़ियों से मुक्ति का प्रयास है। मानसिक दासता से मुक्ति पाने के लिए राहुल ने कहा है कि "हमें अपनी मानसिक दासता की एक-एक कड़ी को बेदर्दी के साथ तोड़कर फेंकने के लिए तैयार होना चाहिए। बाहरी क्रांति से कही ज्यादा जरूरत मानसिक क्रांति की है।" मानसिक दासता से मुक्ति का प्रयास भी नवजागरण का प्रयास है। प्रश्न है क्या हम मानसिक दासता की बेड़ी तोड़ने को तैयार हैं? हमारे मन में इस प्रश्न को उठा देने में ही आज राहुल की सार्थकता है।

राहुल के चिन्तन का मुख्य उल्लेखनीय आयाम है, मानव समाज के विकास की द्वन्द्वात्मक परख। इसी के आधार पर उन्होंने समाज का विश्लेषण कर दुख और दारिद्रय को समझने का प्रयास किया था। कहना न होगा कि यही द्वन्द्ववाद उनके चिन्तन की कसौटी थी। जिससे उन्होंने शोषक, शोषित, अमीर, गरीब, उपेक्षितों को देखा था। शोषकों को राहुल ने जोंक शब्द से संबोधित किया है। परिभाषा है "जोंक-जो अपनी परवरिश के लिए धरती पर मेहनत का सहारा नहीं लेतीं। वे दूसरों के अर्जित खून पर गुजर करती हैं। मानुषी जोंकें पाशविक जोंकों से ज्यादा भयंकर होती हैं।" राहुल इन शोषक जोंको का अन्त चाहते थे। इन्हीं ने सामाजिक संतुलन बिगाड़ रखा है, ऐसा उनका विश्वास था। इसी दृष्टि से उन्होंने दो-दो महायुद्धों में लिप्त शक्तियों की पहचान की थी। राहुल की चिन्तन धारा सामन्तवाद, पूंजीवाद, साम्राज्यवाद के विरोध की धारा है, जिसने संकीर्णता, मौलवाद, विकृतिवाद, रूढ़िवाद, विच्छिन्नतावाद, साम्प्रदायिकता को विकास के पथ में बाधक माना है।

अन्त में राहुल की पुस्तक "भागो नहीं (दुनिया को) बदलो" के प्रथम संस्करण से एक उद्धरण देकर बात खत्म करना चाहूंगा। "मैं किसी एक आदमी को दोषी नहीं मानता। आज जिस तरह का मानुख जाति का ढांचा दिखाई पड़ता है, असल में सब दोष उसी ढांचे का है। जब तक वह ढांचा तोड़कर नया ढांचा नहीं बनाया जाता, तब तक दुनिया नरक बनी रहेगी। ढांचा तोड़ना भी एक आदमी के बूते का नहीं है, इसलिए उन सब लोगों को काम करना है, जिनको इस ढांचे ने आदमी नहीं रहने दिया।"

राहुल ने आजीवन ढांचे को तोड़ने का प्रयास किया। ठीक ही है अकेले बस का नहीं था। ढांचे को तोड़ने का प्रयास करना ही उनको स्मरण करना है।

हिन्दी विभाग, वर्धमान विश्वविद्यालय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org